International Journal of Humanities and Social Science Research
www.socialsciencejournal.in
ISSN: 2455-2070
Received: 15-01-2023, Accepted: 30-01-2023, Published: 16-02-2023
Volume 9, Issue 1, 2023, Page No. 70-76

औपनिवेशिक पश्चिमी बिहार में भूमि, जाति और समुदाय की ऐतिहासिकता

कन्हैया कुमार यादव
पीएच. डी शोधार्थी, इतिहास विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

सारांश
यह आलेख उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध तथा बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में औपनिवेशिक पश्चिमी बिहार खासकर सारण जिले से संबंधित सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक बदलावों को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में देखने का एक प्रयास है। इस लेख में औपनिवेशिक दौर की आधिकारिक रिपोर्टों, दस्तावेजों, माइग्रेशन व सेटलमेंट रिपोर्टों, अखबार एवं पत्र–पत्रिकाओं के अलावा भिखारी ठाकुर के नाटकों को प्राथमिक स्रोत के रूप में इस्तेमाल किया गया है। इन स्रोतों से मिले आकड़ों से यह स्पष्ट हो जाता है कि उन्नीसवीं सदी के अंतिम तथा बीसवीं सदी के प्रारंभिक दशकों के दौरान बिहार के सारण जिला में निम्न जातियों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति काफी दयनीय थी। खेती योग्य भूमि पर ऊँची जातियों का नियंत्रण था। अधिकांशतः लोग भूमिहीन थे। रोजगार सृजन नगण्य के बराबर था।
इन परिस्थितियों में लोगों के पास पलायन के बजाय कोई दूसरा विकल्प नहीं था। यही कारण था कि इस दौरान हम देखते हैं कि सारण संपूर्ण बंगाल प्रांत में सबसे ज्यादा पलायन करने वाले जिलों में सुमार था। अंततोगत्वा, अलगाव का दर्द भोजपुरी समाज के लोकगीतों के प्रमुख विशेषता बन गई, जो इस दौरान के भोजपुरी लोकगीतों में साफ दृष्टिगोचर होता है। इसी परिवेश में बिदेशिया जैसी साहित्यिक विरासत का जन्म होता है।

मूल शब्दः औपनिवेशिकता, भूमि, भूस्वामी, जाति, समुदाय, राजस्व और पलायन।

"पिया गइलन कलकतवा ए सजनी!
तूरि दिहलन पति–पत्नी–नातावा ए सजनी,
किरिन भीतर परातवा ए सजनी!
गोड़वा में जूता नइखे, सिरवा पर न छातावा ए सजनी,
कइसे चलिहन राहातावा ए सजनी"[1]

(भिखारी ठाकुर अपने नाटक "बिदेसिया" में भोजपुरी श्रम–पलायन की दुर्दशा बयां करते है। पति अपनी नव नवेली पत्नी को छोड़कर कलकत्ता (कोलकाता) कमाने चला जाता है। पत्नी को लगता है कि अब उसका पति किसी और महिला से संबंध स्थापित कर लेगा। कहीं वह दूसरी शादी न कर ले। इसी बात की चिंता उसे सताये जा रही है. फिर भी उसे अपने पति का याद आ रही है। जो प्रातःकाल में बिन बताये चुपके से चला गया है. उसके पैर में न जूता है और न चप्पल. यहाँ तक की धूप–बारिश से बचने के लिए उसके पास छाता भी नहीं है।)

उन्नीसवीं सदी के उतरार्ध और बीसवीं सदी के पूर्वार्ध में औपनिवेशिक काल में पश्चिमी बिहार से श्रम–प्रवसन की व्यापक परिघटना शुरू हो गयी थी। औपनिवेशिक काल से ही इस इलाके के खेतिहर जातियों के पास कृषिगत भूमि की अभाव देखने को मिलता है। किसानों के पास कृषि के लिए वैज्ञानिक साधनों का भी अभाव रहा था. यहाँ के किसान पूरी तरह से प्रकृति पर निर्भर थे। अंग्रेजी हुकूमत द्वारा जमींदारी प्रथा लागू करने के बाद किसानों की हालत और खराब होती गई। इन परिस्थितियों में इस इलाके के लोगों को जीविका के लिए बड़ी संख्या में विस्थापित होना पड़ा। भाषाविद् जी.ए.ग्रियर्सन (George Abraham Grierson) भोजपुरी तथा भोजपुरी लोगों के स्वभाव के बारें में लिखा हैं, "भोजपुरी एक ऊर्जावान नस्ल (energetic race) की एक व्यावहारिक भाषा (practical language) है, यह एक ऐसा नस्ल है, जो खूद को परिस्थितियों के अनुकूल हमेशा तैयार रखता हैं, और इन लोगों ने पूरे भारत में अपना प्रभाव डाला हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपने भाग्य को किसी भी अवसर से बदलने के लिए तैयार रहता हैं। हिंदुस्तानी सेना में भर्ती होने का मामला हो या 1857 के विद्रोह में ब्रिटिश सेना के रूप में सेवा प्रदान करना, भोजपुरी लोगों ने प्रमुख रुप से भाग लिया हैं... हजारों भोजपुरी लोग बागानों में काम करने हेतु ब्रिटिश उपनिवेशों में चले गयें हैं और वहाँ से धनी व्यक्ति के रूप में वापस आते हैं. हर साल बड़ी संख्या में भोजपुरी लोग उत्तरी बंगाल में रोजगार की तलाश में भटकते हैं अन्यथा पालकी उठाते हैं या डकैत के रूप में कार्य करते हैं। बंगाल का प्रत्येक जमींदार अपने यहाँ दरबान के रूप में इन लोगों से सेवा लेते हैं. कलकत्ता, जहाँ रोजगार का अवसर हैं, भोजपुरी लोगों से भरा हुआ हैं।"[2]

इस प्रकार, औपनिवेशिक काल के आधिकारिक दस्तावेज बताते हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों में भूखमरी व्याप्त थीं, आबादी का घनत्व अपने चरम पर था. मुनाफे के लिए भू–माफिया या ठेकेदार खाद्य फसल के बजाय नकदी फसलों की पैदावार पर जोर दे रहे थे. अंग्रेजी सरकार और स्थानीय राज की सांठगांठ से भू–राजस्व में लगातार बढ़ोतरी हो रही थी। रैयतों और गैर–रैयतों (मजदूर, भूमिहीन लोग) दोनों की हालत जद्दोजहद में फंसा हुआ था. इस जख़्म को और गहरा करने में जमींदारी व्यवस्था और साहूकार वर्गों द्वारा संचालित सूदखोरी धंधा ने उत्प्रेरक का काम किया. लोग अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए अपनी जमीन गिरवी रखने लगे. जरूतमंद लोगों से धूर्त और चालाक महाजन उनकी जमीन भी हड़पने लगे थे. इस प्रकम से हजारों लोग भूमि मालिक होते हुए भी भूमिहीन हो गये। [3]

औपनिवेशिक दौर में सारण जिला लगभग 2600 वर्ग मील में फैला हुआ था. विभाजित होने से पहले इसमें सीवान, गोपालगंज और सारण सम्मिलित था। वर्ष 1973 में तीनों को अलग–अलग जिला बनाया गया. साल 1861 में चंपारण का विभाजन सारण से ही हुआ था. इस तरह, यह क्षेत्र तीन ओर से जलीय सीमा से घिरा हुआ था. दक्षिण में इस जिले को गंगा नदी पटना और शहाबाद जिले से अलग करती थीं, पश्चिमोत्तर में गंडक इसे चंपारण और मुजफ्फरपुर से अलग करती थीं, और दक्षिण–पश्चिम में घाघरा नदी शहाबाद (आज का आरा, भोजपुर, रोहतास) और बलिया (उत्तर प्रदेश) से सीमा बनाती थी।

1. भूमि, जाति और समुदाय

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तथा बीसवीं शताब्दी के शुरुआती दौर में औपनिवेशिक पश्चिमी बिहार का सारण जिला संपूर्ण बिहार प्रांत में अत्यधिक जनसंख्या घनत्व वाला जिला था; जिसमें असंख्य लोग गरीबी में जीवन–निर्वाह कर रहे थे; जातिवाद, उच्च–नीच जैसे कठोर रूप से स्तरीकृत (rigidly stratified) समाज अपनी आजीविका के लिए कृषि उत्पादन की पारंपरिक और अकुशल प्रणाली के साथ– साथ प्रवासन के माध्यम से अर्जित धन पर निर्भर था। पश्चिमी बिहार में भूमि पर नियंत्रण रखने वालों में प्रमुख स्थान बड़े जमींदारों का था, वहीं स्थानीय स्तर पर यूरोपीय नील बागान–मालिकों, छोटे जमींदारों और अच्छी तरह से स्थापित किरायेदारों का वर्चस्व था। एक ओर खेतिहर ढ़ांचे में शामिल कुलीन वर्ग, जिन्हें इतिहासकार नुरूल हसन [4] (Nurul Hasan) स्टेट और गांव के बीच के "बिचौलिए जमींदार" तथा थॉमस [5] (Thomas R. Metcalf) "सत्ता का दलाल" (intermediaries or brokers of power) कहते हैं, जो एक विशेष क्षेत्र की मालगुजारी की वसूली के लिए राज्य से करार करते थे। वहीं दूसरी ओर, ग्रामीण स्तर पर प्राथमिक जमींदारों का एक बड़ा समूह था, जो खेतिहर और रिहायशी, दोनों तरह की जमीनों पर मालिकाना अधिकारों का स्वामी था। इस समूह में छोटे मालिक–किसान भी थे और अनेक गांवों के बड़े–बड़े भूस्वामी भी। [6]

इस प्रकार, औपनिवेशिक काल के आधिकारिक दस्तावेजों तथा रिपोर्टों से इस बात की पुष्टि होती हैं कि बीसवीं सदी के शुरुआती दशकों तक इस क्षेत्र की जनसंख्या में तीव्र वृद्धि तथा मिट्टी पर जनसांख्यिकीय दबाव अपने चरम पर था। वहीं लगान–वृद्धि, अकाल, प्लेग, ऋणग्रस्तता, पलायन इत्यादि इस क्षेत्र के लोगों के बीच सामान्य घटनाएं बन चुका था। जिसके परिणामस्वरूप सामाजिक स्तरीकरण में मौजूद विषमताओं में काफी ज्यादा बढ़ोतरी हुई थी। [7] अधिकांशतः संघर्ष (बसौमे), उन समूहों के भीतर या उनके बीच के विवादों से उत्पन्न हुआ, जिनका ताल्लुकात औपनिवेशिक पश्चिमी बिहार में भूमिहित से जुड़ा हुआ था। इसतरह, इसका स्पष्ट प्रभाव इस क्षेत्र की सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक पहलुओं पर भी पड़ा था।

इस दौरान, इन क्षेत्रों में औपचारिक और अनौपचारिक दो तरह की नियंत्रण प्रणाली उपयोग में लाई जा रही थीं। जहां, औपचारिक नियंत्रण प्रणाली में ब्रिटिश सरकार द्वारा संचालित प्रशासन और पुलिस बल का महत्व था। वहीं दूसरी ओर अनौपचारिक नियंत्रण प्रणाली में स्थानीय जमींदारों, यूरोपीय बागान मालिकों, जेठ रैयतों, चौकीदारों, कानूनगो, पटवारियों और लठैतों की प्रधानता थी। [8]

इसके अतिरिक्त, इस दौरान इस क्षेत्र में लोक संस्कृति की एक विशिष्ट कुलीन अवधारणा भी दिखाई देती हैं, जिसकी प्रकृति अधीनस्थ वर्ग की संस्कृति से काफी हद तक पार्थक्य थीं। लोकप्रिय वर्गों द्वारा उत्पादित संस्कृति का प्रभुत्व यहां के साधारण लोगों पर काफी ज्यादा था. एंटोनियो ग्राम्शी (Antonio Gramsci) के शब्दों में " दूसरों (अधीनस्थ) के बीच शासक वर्ग न केवल सीधे,बाहुबल और भय के माध्यम से शासन करते हैं, बल्कि उनके विचारों को अधीनस्थ वर्गों द्वारा स्वीकार भी कर लिया जाता हैं।" जिसका ताल्लुकात "सांस्कृतिक नायकत्व" (Cultural Hegemony) से जोड़ कर समझ सकते हैं। [9]

1901 के एक रिपोर्ट के अनुसार सारण से कुछ ऊंची जातियां भी बिहार से रोजगार वास्ते बंगाल पलायन की थीं. आम तौर पर उन लोगों का संबंध ब्राह्मण या राजपूत जाति से था; कुछ जगहों पर कायस्थ या भूमिहार ब्राह्मण भी देखे गये। परन्तु प्रवासगमन में संलग्न रहने वाले लोगों में मूलतः निम्न जातियों के लोग थे; जैसे– तांती, अहीर, कुर्मी, कहार, कलवार, भर, दुसाध, नोनिया, बिंद (मल्लाह) और चमार इत्यादि। हालांकि, अठारहवीं शताब्दी के शुरुआती दशकों से ही सारण जिले का जनसंख्या घनत्व काफी ज्यादा हो गया था. हम देख सकते है कि 1881 से 1921 तक पांच दशकीय जनगणनाओं में प्रति वर्ग मील क्रमशः 870, 930, 898, 853 और 872 व्यक्ति जनसंख्या घनत्व रहा. जो एक भयावह तस्वीर को प्रदर्शित करता है। इससे अनुमान लगा सकते है कि इस क्षेत्र की भूमि पर कितना दबाव था? क्योंकि संपूर्ण बंगाल प्रेसिडेंसी में चौबीस परगना और मिदनापुर के बाद इतना ज्यादा घनत्व सिर्फ सारण जिले का था. बिहार प्रांत में पहले स्थान पर काबिज होने के कारण सारण की स्थिति प्रति व्यक्ति घनत्व के मामले में अब अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच चुका था. यह जिला किसी भी स्थिति में अब ज्यादा लोगों का सहन नहीं कर सकता था। [10] यही कारण था कि पलायन इस क्षेत्र के लोगों के बीच रोजी रोटी के लिए सामान्य विकल्प था।

तलिका 1: सारण जिला में जनसंख्या वृद्धि, 1872–1961

Year	Population	Variation	Saran (%)	Bihar (%)
1872	2,075,527			
1881	2,295,001	+219.474	+10.6	+15.6
1891	2,464,830	+169,829	+7.4	+5.9
1901	2,409,365	-55,465	-2.3	+0.2
1911	2,289,699	-119,666	-5.0	+3.7
1921	2,340,222	+50,523	+2.2	−0.7

स्रोतः एस. डी. प्रसाद, जनगणना 1961, जिला जनगणना पुस्तिका–4, सारन, पटनाः बिहार सरकार, 1966.
(नोटः जनसंख्या के आंकड़े–स्रोत दूसरे स्रोत ग्रंथ में भिन्न हो सकते हैं, क्योंकि यह इस बात पर निर्भर करता है कि क्षेत्रीय परिवर्तनों के लिए समायोजन किया गया है या नहीं।)

उपरोक्त आंकड़ों से साफ जाहिर होता है कि जनसंख्या में थोड़ी– बहुत गिरावट होने से यह बिल्कुल नहीं कहा जा सकता हैं कि इस जिले की मिट्टी पर पड़ने वाले दबाव में वर्ष 1921 तक किसी भी तरह की कमी आई थीं। मुजफ्फरपुर जिले को छोड़ दें, तो संपूर्ण बंगाल प्रांत में सबसे घनी आबादी का दबाव सारण जिले पर था। इस जिले का जनसंख्या घनत्व औसतन 901 व्यक्ति प्रति वर्ग मील रहा था। इस प्रकार, जनसंख्या का दबाव लगभग संपूर्ण सब–डिवीजन में एक समान रहा था। सिर्फ गोपालगंज सब–डिवीजन में प्रति वर्ग मील 806 व्यक्ति निवास करते थे। वहीं मांझी तथा सीवान थाने में प्रति वर्ग मील में एक हजार से अधिक लोग निवास कर रहे थे। सीवान सब–डिवीजन इस जिले का सबसे ज्यादा घनी आबादी वाला इलाका था। गोपालगंज सब–डिवीजन, प्रति वर्ग मील में 806 व्यक्तियों के साथ, सबसे कम जनसंख्या घनत्व वाला क्षेत्र था। क्योंकि इसमें दियारा भूमि (नदी का तटीय भाग जिसपर बालू ज्यादा होता है, इसे बाढ़ क्षेत्र भी कहा जाता है) का एक बड़ा क्षेत्र शामिल था और एक असामान्य अनुपात में दलदल भूमि के रूप में व्यापक चौर भी शामिल था। जो चावल की भदई किस्म के लिए सर्वाधिक उपयुक्त भूमि थीं। [11]

तालिका 2: सारण जिले के थानों में जनसंख्या घनत्व,1872–1921

Thana	Number of persons per Square mile					
	1872	1881	1891	1901	1911	1921
Chapra	767	848	1,144	907	939	969
Manjhi	901	1,047	1,100	931	814	859
Parsa	839	889	878	843	804	808
Mashrak	984	1,240	819	822	772	780
Sonepur	925	1,134	1,037	868	809	810
Subtotal	872	968	1001	906	846	864
Siwan	830	988	1013	1,023	959	989
Darauli	718	834	893	903	815	827
Basantpur	801	860	977	968	926	944
Subtotal	786	879	966	975	905	925
Gopalganj	605	727	768	786	758	769
Mirganj	620	689	827	820	849	871
Subtotal	611	707	800	804	808	825
District Total	778	870	930	898	853	872

(स्रोतः जे. ए. बॉर्डिलॉन, भारत की जनगणना, 1891, जिला जनगणना रिपोर्ट, सारण, कलकत्ताः बंगाल सचिवालय प्रेस, 1898, पृ. 5)

इस प्रकार, उपरोक्त तालिका में अंकित आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि सारण जिला के छपरा तथा सिवान सब–डिवीजन में 1872 से लेकर 1921 के बीच संपन्न हुई जनगणना रिपोर्टों में औसत जनसंख्या घनत्व प्रति वर्ग मील क्रमशः 909.5 तथा 906 रहा था. वहीं गोपालगंज सब–डिवीजन में यह सिर्फ 759 प्रति वर्ग मील था। इस तरह, संपूर्ण सारण जिले में सिर्फ गोपालगंज सब–डिवीजन (जिसमें मीरगंज तथा गोपालगंज थाना शामिल था) ही एक ऐसा अनुमंडल था, जो बढ़ती आबादी को मामूली स्तर पर सहन कर सकता था। वहीं सीवान, छपरा, सोनपुर, दरौली, बसंतपुर, मशरख, पारसा, मांझी सघन आबादी के मामले में पहले ही अपने चरमोत्कर्ष पर पहुंच चुके थे. 1903 के एक रिपोर्ट के अनुसार सारण जिले में केवल 64 प्रतिशत जनसंख्या, जिसमें पांच सदस्य वाले परिवार ही सरकार द्वारा निर्धारित न्यूनतम जीवन निर्वाह स्तर अर्थात् 2.5 एकड़ जमीन से ऊपर थीं. जो लोग इस स्तर को पाने में असमर्थ थे, उनके पास अपने परिवार को चलाने के लिए दो विकल्प था– या तो बाबू लोगों की खेतों में मजदूरी करें या परदेस कमाने जाये। [12] सारण के प्रवासियों ने नौकरी खोजने तथा उसे पाने के लिए हर प्रकार का रास्ता अख्तियार किया. सभी प्रकार के श्रम को अपनाया। उनके इस कार्य में औपनिवेशिक ट्रांसपोर्ट प्रणाली ने भी बखूबी साथ दिया। क्योंकि यही वक्त है जब असम–बिहार रेलवे और उत्तर–बंगाल रेलवे का निर्माण कार्य पुरा हो रहा था। इसके बदौलत प्रवासियों को रोजगार भी मिला और उन्हें आने– जाने के लिए साधन भी. इस तरह कलकत्ता और उसके आसपास के क्षेत्रों में इस क्षेत्र के प्रवासियों को मुख्य रूप से कुली या मिल– मजदूर का काम मिल रहा था। प्रवासियों ने कुछ नए व्यवसायों को भी सरलता पूर्वक अपनाने में गुरेज नहीं की। ब्राह्मणों ने आम तौर पर तीर्थयात्री संवाहक (pilgrim- conductors), पुजारी, क्लर्क, चपरासी, रसोइया, और कभी–कभी कुली और दिहाड़ी मजदूर का भी कार्य किया. राजपूतों ने मुख्य रूप से सिपाही, द्वारपाल, जेल वार्डन, चपरासी, और रेलवे पोर्टर्स आदि में हाथ आजमाया। वहीं अहीर जाति के प्रवासी मजदूर घरेलू नौकर या दुकानदार के रूप में संलग्न थे। कहार, कुर्मी और दुसाध जाति से ताल्लुक रखने वाले प्रवासी लोग पारिश्रमिक मजदूर के रूप में कार्य कर रहे थे; हालांकि, इनमें से पूर्व में कई घरेलू नौकर के रूप में भी कार्य कर चुके थे और दुसाध जाति के कामगार को अक्सर अस्तबल (syces) में काम मिलता था. गांव में इनका मुख्य काम चौकीदारी का होता था। [13]

तालिका 3

जाति (बेंज)	संख्या (number)	प्रतिशत
टहीर	289,504	12.00
कोइरी	168,616	7.00
चमार	120,830	5.00
कुरमी	116,615	4.80
कानू	92,402	3.80
नोनिया	80,143	3.30
दुसाध	79,168	3.30
तेली	70,748	2.90
गोड़	51,520	
लोहार	47,436	2.00
हज्जाम	34,083	1.40
कहार	33,181	
कुम्हार	30,474	1.30
अतिथ (।जपजी)'	26,753	
राजपूत	259,053	10.80
ब्राह्मण	184,322	7.60
बाभन (भूमिहार)	106,098	4.40

(स्त्रोत– ओ'मेले, एल. एस. एस., बंगाल डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, सारण. कलकत्ताः द बंगाल सेक्रेटेरिएट बुक डिपो, 1908, पृ. 43)

नोटः– हालांकि, उपरोक्त तालिका में उन्हीं जातियों की आबादी दर्ज की गई है जिनकी आबादी पच्चीस हजार से ज्यादा ह।. इसलिए इस क्षेत्र की अन्य जातियाँ जैसे– डोम, नट, भाट, नेटुवा, भर, कमकर, मल्लाह, रोनियार, पटवा इत्यादि को शामिल नहीं किया हैं. 'अतिथः– ओ' मेले (O' Malley) की 1901 की जनगणना रिपोर्ट के अनुसार बंगाल और पूर्वी बंगाल में लगभग 50,042 अतिथ लोगों की आबादी थी. जिसमें से आधे से अधिक अर्थात् 26,753 अतिथ सारण जिले में पाये जाते थे. उनके अनुसार अतिथ का मतलब है– "आकास्मिक मेहमान" (unexpected guest), ये लोग बसहा बैल लेकर गांव–गांव घूमते थे. इनमें शामिल लोग शंकराचार्य के अनुयायी थे। जिन्हें "दसनामी" (ten subsects or kuris) कहा जाता था। इस रिपोर्ट में इन्हें दो मुख्य वर्गों में विभाजित किया गया हैं; संयासी अतिथ तथा घरबारी (गृहस्थ) अतिथ. ये दोनों वर्ग खुद को बाबाजी कहलाना ज्यादा पसंद करते थे. लेकिन बाहरी लोग इन्हें गोसाईं पुकारते थे। इनसे जुड़े गृहस्थ अतिथ अपने नाम में गिरि, गोसाईं, या पुरी टाइटल लगाते थे. इस समुदाय के लोगों में आज भी शिव की पूजा होती है। इनमें लिंग पूजा, बन्ही माता, तथा गोरेया बाबा पूजा भी होता है।

1901 की जनगणना के अनुसार स्पष्ट होता है कि सारण जिले में सबसे ज्यादा आबादी अहीर जातियों की थीं। जो लगभग तीन लाख के करीब था। उसके बाद क्रमशः राजपूतों और ब्राह्मणों की आबादी थीं. लेकिन खेतीबाड़ी से संबंधित मुख्यतः तीन जातियाँ थीं– अहीर, कोइरी और कुरमी।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सारण जिले में "सामाजिक–संपति संबंधों" की जड़ें, यहां के निवासियों की भूमि और अन्य संसाधनों पर उनकी पहुंच पर आधारित थी। जैसा कि अनेक विचारकों का मानना है कि भूमि पर "स्वामित्व" के कारण भूमिधारक स्वाभाविक रूप से सामाजिक–आर्थिक और राजनीतिक रूप से सशक्त हो जाता हैं। जैसा कि फ्रांसीसी मानव विज्ञानी लुइस ड्यूमौन्ट (Louis Dumont) का तर्क हैं कि "क्षेत्र, शक्ति, और ग्राम–प्रभुत्व 'भूमि पर कब्जा' करने के फलस्वरूप उत्पन्न होता हैं।" [14] पश्चिमी बिहार के भोजपुरी समाज में आज भी सामाजिक–आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्र (domain) बारीकी पूर्वक एक दूसरे से जुड़ा हुआ हैं; जिसके पास आर्थिक संसाधन हैं, वही सामाजिक और राजनीतिक रूप से सशक्त हैं; और जिसके पास राजनीतिक शक्ति है वहीं सामाजिक–आर्थिक रूप से संपन्न हैं। लुइस ड्यूमौन्ट (Louis Dumont) का तर्क हैं कि ब्रिटिश औपनिवेशिक भारत में जाति व्यवस्था के भीतर ही सामाजिक व्यवस्था से संबंधित सारी समस्या व्याप्त थी। इस व्यवस्था में ना तो समानता थीं और ना सम्मान। उनके अनुसार औपनिवेशिक भारत की जाति– व्यवस्था में तीन विशेषताएं विशेष रूप से परिलक्षित होती हैं; पहला, संपूर्ण समाज 'वंशानुगत समूहों (hereditary groups)' में विभाजित था; जो एक दूसरे से पूरी तरह अलग थे... उनमें शादी, भोजन व संपर्क के आधार पर अलगाव था। दूसरा, समाज मे 'श्रम–विभाजन (division of labour) था, प्रत्येक जाति समूह के पास अपना वंशानुगत पेशा होता था; और वह उसके बाहर नहीं जा सकता था। तीसरा, 'पदानुक्रम (hierarchy)', संपूर्ण समाज रैंक आधारित था, अर्थात् प्रत्येक समाज एक दूसरे से अपेक्षाकृत श्रेष्ठ या निम्न दर्जा रखता था। इसतरह, संपूर्ण ग्रामीण समाज विचारों और मूल्यों की रूढ़िवादी प्रणाली में जकड़ा हुआ था।"[15]

हालांकि, दक्षिण एशिया के सभी विद्वान लुईस ड्यूमौन्ट के इस विचार से सहमत नहीं हैं; वे इसके बजाय समाज को व्यवस्थित करने में वर्ग या आर्थिक शक्ति की स्वायत्त भूमिका पर ज्यादा जोर देते हैं। वहीं कुछ विद्वान प्रभावशाली जाति मॉडल तथा धनी किसानों के परिप्रेक्ष्य मे औपनिवेशिक ग्रामीण भारत का अध्ययन प्रस्तुत करते हैं। लेकिन यहां भी उनलोगों का मुख्य जोर आर्थिक कारकों पर ही रहा हैं न कि जाति– वर्ग संघर्ष पर। जाति व्यवस्था के अंतर्गत राजनीतिक सत्ता संरचना में लंबे समय तक किसी खास जाति समुदाय के लोगों का नियंत्रण स्पष्ट करता है कि औपनिवेशिक भारतीय सामाजिक– संरचना में आभिजात्य वर्ग का उत्पादन–अधिशेष पर न केवल विशेष पकड़ था बल्कि वह सामाजिक–सांस्कृतिक जैसे वैचारिक मामलों में भी नायकत्व की भूमिका का निर्वहन कर रहा था। यही कारण है कि पश्चिमी बिहार के ग्रामीण जीवन में मौजूदा अधीनस्थ वर्ग तथा अभिजात वर्ग के बीच टकराव तथा उनसे उत्पन्न किसी संघर्षशील वैचारिक प्रतिरोध का प्रमाण नहीं मिलता हैं। हालांकि, यह जरूर मिलता है कि अभिजात्य वर्ग की लोकप्रिय संस्कृति के परिपेक्ष्य में एक वैकल्पिक संस्कृति के रूप लोक–संस्कृति का आविर्भाव जरुर हुआ। लेकिन उसमें अभिजात्य की प्रतीकों, देवी–देवताओं, तीर्थ स्थलों का ही प्रधानता रहा। इस तरह, सारण जिले के कृषि संरचना में भी सांस्कृतिक प्रतीकवाद कहीं न कहीं आर्थिक–शक्ति और जाति–व्यवस्था के अनुरूप प्रदर्शित हो रहा था। इनके बीच जुड़ाव चोली–दामन जैसा संबंध था। इस क्षेत्र के गरीब भूमिहीन–कृषकों तथा मजदूरों ने औपनिवेशिक सत्ता तथा स्थानीय राज एवं बड़े रैयतों, साहूकारों, सूदखोरों, यूरोपीय बागान मालिकों तथा भू माफियाओं के खिलाफ प्रतिरोध जताने के बजाय "फुटलूज लेबर" (footloose labour) बनना ज्यादा उचित समझा।[16]

तालिका 4

भू–स्वामित्व जातियाँ	कुल खेतिहर भूमि		
	1793	1872-1873	1893-1901
ब्राह्मण	80%	53%	11%
श्राजपूत			24.10%
भूमिहार			2.90%
कायस्थ			3.50%
बनिया	0.10%	4%	
मुसलमान	11.80%	15%	6.50%
खेतिहर जातियाँ'	0.30%	4%	24%
टहीर			9.90%
कुरमी			4.80%
कोईरी			9.10%
निम्न जातियाँ	0.70%	-	5.70%
अन्य जातियाँ	-	-	17%

(स्त्रोत– गवर्नमेंट ऑफ बंगाल, "डिस्ट्रिक्ट रिपोर्ट, सारण," डिविजनल एंड डिस्ट्रिक्ट एनुअल एडमिनिस्ट्रेशन रिपोर्ट, 1872–73, 1874: 397–98, बॉर्डिलॉन 1883:260–281, बॉर्डिलॉन 1898:5:72–81, ओ' मेले 1913,5, भाग–.3य एवं और देखे यांग 1989:44–46)

हालांकि, भूमि जोत पर नियंत्रण रखने का पहला आधिकारिक विवरण 1793 के स्थानीय बंदोबस्त से मिलता है। इससे जानकारी मिलता हैं कि ब्राह्मण, राजपूत और भूमिहार तथा कायस्थ जातियों की कुल आबादी प्रतिशत जहाँ 20 प्रतिशत से भी कम थी, वहीं इन जातियों के पास संपूर्ण जोत का 80 प्रतिशत हिस्सा नियंत्रण में था। वहीं मुसलमानों तथा बनियों के पास क्रमशः 15 प्रतिशत तथा चार प्रतिशत भूमि नियंत्रण में थीं। शेष एक प्रतिशत भूमि जोत में 0.3 प्रतिशत भूमि पर कृषि जातियों (अहीर, कुर्मी तथा कोइरी) का नियंत्रण था एवं 0.7 प्रतिशत भूमि निम्न जातियों के पास थी। 1872–1873 में ऊंची जातियों (ब्राह्मण, राजपूत, भूमिहार, कायस्थ) के पास संपूर्ण जोत का 53 प्रतिशत भूमि अधिकार क्षेत्र में थी जबकि इनकी कुल आबादी संपूर्ण आबादी का सिर्फ 25.2 फिसदी थी। मुसलमानों के पास 17 प्रतिशत तथा बनियों के पास 6 प्रतिशत भूमि थी। हालांकि, बनियों के आंकड़े अचंभित करते है, इसलिए कि इनकी आबादी 1872 की जनगणना में मात्र 0.1 प्रतिशत थी लेकिन कुल भूमि में लगभग 4 चार प्रतिशत भूमि पर इनका कब्जा था. जो कि 1901 के जनगणन के दौरान छः प्रतिशत हो गया था यानि दो प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई थी।[17]

2. सारण में भू–राजस्व की ऐतिहासिकता

सारण जिले में भू–राजस्व संबंधित सबसे पुराना ऐतिहासिक आधिकारिक विवरण हमें आईने अकबरी में मिलता है। राजा टोडरमल ने "सरकार सारण" में खेतीहर भूमि की पैमाइश करायी थीं। दरअसल, अकबर के दौर में बिहार सूबे को सात सरकार में विभाजित किया गया था. जिसमें 199 परगना तथा 22 करोड़, 19 लाख, 19,404) (लगभग 55,47,985–1–3 रुपया) दाम के बराबर भू–राजस्व प्राप्त होने की जानकारी मिलती है।[18] सात सरकारों का क्रम कुछ इस प्रकार से था; बिहार (46 महल), मुंगेर (31 महल), चंपारण (3 महल), हाजीपुर (11 महल), सारण (17 महल), तिरहुत (74 महल) तथा रोहतास (18 महल). आईने अकबरी (भाग–दो) में वर्णित है कि सारण 'सरकार' में सत्तरह महल, 229,052 बीघा तथा 15 बिसवा जमीन की रकबा शामिल था। जहाँ से लगभग 60,172,004) दाम भू–राजस्व की प्राप्ति हो रही थीं। सारण सरकार के लिए 1000 अश्वसेना (cavalry) तथा 50,000 पैदल सेना (Infantry) निर्धारित था।[19]

तालिका 5

क्र.सं.	सत्तरह महल की सूची	बीघा जमीन	दाम
1.	इन्दर (Indar)	7,218	534,990
2.	बरारी (Barari)	7,117	533,820
3.	नरहन (Narhan)	8,611	654,508
4.	पचलाखा (Pachlakhi)	9,266	437,997
5.	चानेंद (Chanend)	8,413	633,270
6.	चौबारा (Chaubar)	————————	400,000
7.	जूवेनूह (Juwainuh)	6,963	309,285
8.	डेगसी (Degsi)	5,825	277,630
9.	सिपाह (Sipah)	3,662	290,592
10.	पाल (Pal)	66,320	4,893,378
11.	बड़ा (Bar)	15,059	383797 1ध्2
12.	गोदाह गांव (Godah Gawa?)	28,049	2,012,950
13.	कलियानपुर (Kaliyanpur)	17,437	774,696
14.	कशमिर (Kashmir)	16,915	1,314,539
15.	मांझी (Mangjhi)	8,752	611,813
16.	मंडल (Mandhal)	9,405	698,140
17.	मकेर (Maker)	10,936	811,095

(स्त्रोत– अबुल, फजल "अल्लामी", "आईन– ए–अकबरी," भाग–2,अंग्रेजी अनुवाद– कर्नल एच. एस. जारैट (H.S. Jarrett), द्वितीय संस्करण – जदुनाथ सरकार, कलकत्ताः रॉयल एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल,1 पार्क स्ट्रीट, 1949, पृ. 167.)

उपर्युक्त विवरण में हम देख सकते हैं कि सारण सरकार में मौजूद सभी 17 महलों में सबसे ज्यादा भू–राजस्व पाल महल से दिया जा रहा था और सबसे कम भू–राजस्व डेगसी और सिपाह महल से दिया जा रहा था। हालांकि, 1685 में औरंगजेब द्वारा भी इस क्षेत्र का भूमि पैमाइश कराया गयी थी और उस वक्त सरकार सारण में 8,01,461 रुपया राजस्व के रूप में निर्धारित किया गया था । लेकिन इस बात की कोई जानकारी नहीं मिलता हैं कि उस वक्त कितने जमीन (cultivated areas) की पैमाइश करायी गयी थी। 1750 में सूबेदार अलीवर्दी खान के समय "सरकार सारण" से 9,29,856 रुपया कर–राजस्व के रूप में प्राप्त किया जा रहा था। 1765 में मोहम्मद रजा खान ने भूमि की दोबारा पैमाइश करायी थी। उस वक्त 2,560 वर्ग मील जमीन की जानकारी मिलती है। जिसमें खेतिहर भूमि 6,80,000 रैयती बीघा थीं. लेकिन राजस्व पैमाइश संबंधी सबसे अधिक भरोसेमंद विवरण 1773 ईस्वी में बंगाल के सुबेदार नवाब होशियार जंग के समय से मिलता है. समकालीन कानूनगो जामा वसिल बाकी (Jama Wasil Baki) के फसली वर्ष 1180 से जुड़े पेपर से यह विवरण प्राप्त होता है कि सरकार 'सारण' में पन्द्रह परगना शामिल था; जिसमें तिरहुत का भी कुछ हिस्सा शामिल था जिसे कसमर (Kasmar) के नाम से संबोधित किया गया है। इसके अतिरिक्त सारण में 1,640 "महल" तथा 4,650 "गांव" शामिल होने की जानकारी मिलती है. हालांकि, 4,650 गांवों में से 2,861 गांव को "असली" तथा शेष 1,789 गांव को "दखली" के नाम से पुकारा गया हैं। खेतिहर भूमि का कुल क्षेत्रफल 13,35,872 बीघा था। जिसमें से 1,13,002 बीघा जमीन करमुक्त था। इसतरह, नवाब होशियार जंग को 'सरकार सारण' में शामिल पन्द्रह परगनो से कुल 9,36,201 रुपया (जिसमें अबवाब भी शामिल था) वार्षिक रूप से प्राप्त हो रहा था।[20] सारण जिले का सबसे बड़ा एस्टेट हथुआ राज के अंतर्गत 1,155 गांव शामिल थे। कुल खेतीहर भूमि 2,61,006 बीघा या 1,95,755 एकड़ था। ब्रिटिश सरकार द्वारा इस राज से "बारह अन्ना" प्रति वर्ष प्रति एकड़ के हिसाब से कर वसूला जा रहा था। 1802 में हथुआ राज का वार्षिक सरकारी राजस्व 1,54,008 रुपया था, जो 1873–74 में 689,144 रूपया तथा 1903–1904 में 850,000 रुपया था।। 1897–98 के दौरान हथुआ राज में 127 महल (revenue estate) तथा 1,443 गांव शामिल थे। वहीं हमें हथुआ एस्टेट द्वारा "राजस्व चोरी" का एक दिलचस्प विवरण भी मिलता है– ब्रिटिश सरकार को लगा कि हथुआ राज ने कर राजस्व का गलत ब्यौरा भेजा है। तत्कालीन कलेक्टर ने लिखा है कि "हथुआ राज ने 23,000 रूपये का गबन किया है। साथ ही राजा छतरधारी शाही ने अपनी राजस्व अदायगी में काफी ज्यादा लापरवाही बरती हैं।" कलेक्टर अपने आला अधिकारियों को संबोधित करते हुए आगे लिखता है कि हथुआ राज से सामान्य वर्ष में वार्षिक रूप से साठ हजार रुपया से कम राजस्व नहीं लेना चाहिए।" [21]

हथुआ राज के आधिकारिक दस्तावेजों से मालूम पड़ता है कि 1854 में गांवों के ऊपर थोपी गई करों में भारी बढ़ोत्तरी की गई थी। इस वर्ष से एक रुपया पर चार आन्ने (four anns) की बढ़ोतरी हुई थीं। वहीं कुछ सालों बाद दो आन्ने की बढ़ोतरी हुई। इसे "भैया चंद्रलाल का अन्ना बेशि (Bhiaya Chandralal ka anna beshi)" के नाम से जाना जाता था। 1870 में हथुआ राज द्वारा एक बार पुनः भूमि पैमाइश करायी गयी। इस तरह, एक बार पुनः करो में बढ़ोतरी की गई। 1870 से 1880 तक भूमि पैमाइश का कार्य चलता रहा, इस दौरान नए क्षेत्रों का सेटलमेंट भी किया गया । लेकिन 1880 तक किसी भी हाल में भूमि सर्वेक्षण से जुड़े नए पैमाइश को लागू नहीं किया गया था। यह भी जानकारी मिलता है कि 1869, 1870, 1872 तथा 1882 में राज द्वारा जमाबंदी का कार्य संपन्न कराया गया था। [22]

हालांकि, उन्नीसवीं सदी के शुरुआती वर्षों तक अकबर कालीन भूमि सेटलमेंट से जुड़ा कोई संतोषजनक साक्ष्य इस क्षेत्र से प्राप्त नहीं होता हैं, लेकिन उन्नीसवीं शताब्दी के चतुर्थांश तक एक रूपया प्रति एकड़ कर प्राप्त होने की जानकारी अवश्य मिलती हैं। सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि संपूर्ण सारण में "एक समान कर–दर" कभी भी लागू नहीं था। जिले के उत्तरी भाग में जहां एक रुपया प्रति एकड़ से कर लिया जा रहा था; वहीं बाकी क्षेत्रों में दो से चार रूपए के बीच प्रति एकड़ की दर से कर लिया जा रहा था। अर्थात् जिले के दक्षिणी हिस्से में भू–राजस्व का दर उच्च था। [23]

इस तरह, 1870 के अंत तक हथुआ राज में कर की दर प्रति एकड़ 4 से 14 रूपए के बीच निर्धारित था। जो बाकी क्षेत्रों से काफी ज्यादा था। गोपालगंज सब–डिवीजन को छोड़ दें, तो पाते हैं कि छपरा सब–डिवीजन में बसे हुए लोगों तथा अधिकृत रैयतों की स्थिति अति जोखिम भरा था। यहां पर कर का औसत दर 4–5–4 रुपया प्रति एकड़ था । सबसे ज्यादा कर सोनपुर तथा छपरा थाना में लिया जा रहा था, जहां प्रति एकड़ 5–8–7 तथा 5–6–7 रुपया भूराजस्व निर्धारित था। गांवों में सबसे ज्यादा कर देने में शुमार था– मांझा बाबू गांव, उसके बाद चैनपुर बाबू का एस्टेट आता था। नील की खेती से संबंधित पट्टे वाली जमीनों पर सबसे कम कर लिया जा रहा था। इसमें कोई शंका नहीं है कि हथुआ राज अपने वफादार जमींदार वर्ग के प्रति काफी दयालु था बनिस्पत किसान– रैयतों के। [24]

हालांकि, उन्नीसवीं सदी का विश्व इतिहास लिखने वाले विद्वान अकाल से अभिशप्त इन देशों और उनके निवासियों की त्रासदी को बिलकुल अनदेखा कर जाते हैं। माइक डेविस अपना विवरण अमरीका के पूर्व राष्ट्रपति यूलिसिस ग्रांट की यूरोप और एशिया की उस यात्रा से शुरू करते हैं, जो 1877 में आरंभ हुई। इस यात्रा में ग्रांट के साथ अमरीकी पत्रकार जॉन रसेल यंग भी थे, जिन्होंने इस यात्रा का आँखों–देखा विवरण 'न्यूयॉर्क हेराल्ड' में लिखा था। यह यात्रा ठीक उस समय हो रही थी, जब हिंदुस्तान समेत एशिया के तमाम देश भयावह अकाल से जूझ रहे थे। 1876–79 तक चले इस अकाल में लगभग 50 लाख लोग काल–कवलित हो गए थे। उल्लेखनीय है कि इस त्रासदी पर ध्यान देने की बजाय लॉर्ड लिटन ने 1877 में दिल्ली दरबार आयोजित किया। साम्राज्यवाद के इसी आडंबर और अमानवीय

रुख पर टिप्पणी करते हुए जॉन रसेल ने लिखा हैं कि 'पूर्व के देशों में ब्रिटिश– प्रभुत्व असल में ब्रिटिश उत्पीड़न का ही दूसरा नाम है।' उनका मानना था कि दुनिया के किसी भी अन्य देश में निरंकुशता उस चरम रूप में उन्हें नहीं दिखती, जितनी कि ब्रिटिश उपनिवेशों में। खुद ब्रिटेन में भी विलियम डिग्बी और अल्फ्रेड वालेस सरीखे विद्वान ब्रिटिश उपनिवेशवाद की अमानवीय नीतियों की जमकर आलोचना कर रहे थे और इन अकालों और उनसे उपजी भुखमरी को 'राजनीतिक त्रासदी' के रूप में देख रहे थे। आर्थिक इतिहासकार कार्ल पोलान्यी ने 1944 में लिखी अपनी किताब 'द ग्रेट ट्रांसफोर्मेशन (The great transformation)' में विक्टोरिया युगीन इन अकालों को 'पूँजीवादी आधुनिकता के इतिहास का एक भयावह अध्याय' करार दिया था। उनके अनुसार "अकाल" उस जबरिया नीति (वितबमक चवसपबपमे) का परिणाम था, जिसके अंतर्गत बिलकुल अलग ढंग से संगठित एशियाई और अफ्रीकी समाजों पर बाजारवादी अर्थव्यवस्था थोप दी गई थीं। जिसे बर्तोल्त ब्रेख्त ने करारा व्यंग्य करते हुए "अकाल के आयोजन का भव्य तरीका" कहा था। [25]

प्रश्न यह भी उठता है कि किसी सामान्य परिवार के जीवन निर्वाह के लिए औपनिवेशिक सारण जिले मे कम से कम कितनी जमीन की आवश्यकता थी? हालांकि एक परिवार का संदर्भ पांच सदस्यों से हैं। इस संदर्भ में ग्रियर्सन (G-A- Grierson) तथा स्टीवेंसन मूरे (Stevenson- Moore) का मानना हैं कि एक साधारण कृषक परिवार के जीवन–निर्वाह के लिए एक वर्ष के भीतर प्रति व्यक्ति पन्द्रह रूपया खर्च आ रहा था। वर्ष 1888 के दौरान सारण के कलक्टर रहें जे.ए. बॉर्डिलन (J-A- Bourdillon) लिखते हैं कि "इस जिले में संपूर्ण गांव की एक चौथाई आबादी के पास एक एकड़ से भी कम खेतीहर जमीन है। ऐसे परिवारों का जीवनयापन दूसरों के खेतों में मजदूरी करके होता है।" [26] इस इलाके का सेटलमेंट रिपोर्ट लिखने वाले जे.एच. केर (J-H- Kerr) का मत है कि एक साधारण परिवार में प्रत्येक सदस्यों द्वारा कम से कम 75 रूपए खर्च किया जाना चाहिए। एक परिवार में सुविधाजनक जीवन–निर्वाह के लिए वार्षिक रूप से 15 रूपए खर्च करना काफी कम है; जिससे उनका शारीरिक तथा मानसिक दोनों स्थिति अच्छी नहीं हो सकती है। एक एकड़ खेत में कृषि उत्पादन आदि से औसतन 10 से 25 रुपया का लाभ होता था। लेकिन एक एकड़ जमीन एक परिवार के जीवन–निर्वाह के लिए बचत के रूप में काफी कम सहायता कर पा रहा था। जुताई–बुवाई पर खर्च इतना ज्यादा था की उनके पास बीज (seeds) खरीदने के भी पैसे भी नहीं होते थे। यही कारण था कि सारणवासी अपने परिवार के जीवन– निर्वाह के लिए बाहर जाकर मजदूरी करते थे; ताकि एक साधारण वर्ष में अपने परिवार का ख्याल रख सके। जिस परिवार के पास तीन एकड़ जमीन होती थी, वह परिवार सुविधाजनक अपने सभी सदस्यों का पेट भर सकता था, साथ ही अपनी कुछ जरूरतों को भी पूरा कर लेता था. इस प्रकार, ऐसा परिवार अपने खेतों में होने वाले सभी कार्य, जैसे– जुताई (digging), बुवाई (ploughing), कटाई (cutting), निराई (weeding) या फसलों के प्रत्यारोपण (transplantation) इत्यादि, परिवार के सदस्यों की मदद से स्वयं कर लेते थे; फलस्वरूप प्रति वर्ष दस रूपए का बचत भी हो जाता था। [27]

निष्कर्ष

उपरोक्त विवरणों के आधार पर हम कह सकते हैं कि सारण के कृषक समाज में सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक स्तर पर विभिन्न प्रकार के भेदभाव और विषमताओं की मौजूदगी ने कृषि संरचना में अवरुद्ध पैदा किया और जिसका प्रभाव वहाँ के सामान्य जन के जीवन– निर्वाह पर व्यापक रूप से पड़ा। उन्नीसवीं सदी के अंत तक कुल भूमि की लगभग 54 प्रतिशत हिस्से पर ऊंची जाति के लोगों का कब्जा था और जो कुल आबादी के सिर्फ 21 प्रतिशत ही थे। कृषि समाज से ताल्लुक रखने वाले जातियों के पास संपूर्ण खेतीहर भूमि की सिर्फ चार प्रतिशत भूमि ही कब्जे में था।

बीसवीं शताब्दी के शुरुआती दशक तक सारण जिले की संपूर्ण आबादी की लगभग बीस प्रतिशत अर्थात पांच लाख लोग अपनी जीवनयापन के लिए दैनिक मजदूरी (pure wage labourers) पर निर्भर थे. उसमें से भी आधे लोगों के पास जीवन– निर्वाह के लिए सिर्फ अढ़ाई एकड़ से कम जमीन थीं। आधिकारिक स्त्रोतों के अनुसार कुल आबादी का लगभग ग्यारह प्रतिशत लोग भूमिहीन थे और यहीं वे लोग थे जो आर्थिक रूप से सबसे ज्यादा विक्षिप्त थे और पलायन के लिए मजबूर थे।

पश्चिमी बिहार में आज भी बड़े पैमाने पर श्रम–प्रवसन कार्य जारी हैं. इस क्षेत्र के लोग आज के तारीख में पूरब (बंगाल, असम, म्यांमार) न जाकर पश्चिम (महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान, दिल्ली) की ओर रूख करना ज्यादा पसंद कर रहे हैं। इस क्षेत्र में जात–पात, ऊंच–नीच, अमीर–गरीब के बीच की खाई और गहरी होती जा रही है. इस तरह, उपरोक्त सभी विवरणों के आधार पर हम कह सकते है कि सारण जिला से होने वाला पलायन ना तो पूरी तरह स्वैच्छिक था और ना ही पूरी तरह से बलपूर्वक बल्कि यह औपनिवेशिक काल की समकालीन सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक प्रतिक्रियाओं का परिणाम था।

सन्दर्भ–सूची

1. भिखारी ठाकुर ग्रंथावली, प्रथम खंड, संग्रहकर्ता– शिलानाथ ठाकुरः गौरीशंकर ठाकुर, बिदेसिया/बहरा बहार नाटक, लोक कलाकार भिखारी ठाकुर आश्रम कुतुबपुर (सारन), 1979 पृ.सं. 16 और देखें भिखारी ठाकुर रचनावली, बिहार राष्ट्रभाषा–परिषद, 2005, पृ. 27.
2. एल.एस.एस. ओ'मेले, बंगाल जिला गजेटियर्सः सारण, कलकत्ताः द बंगाल सेक्रेटेरिएट बुक डिपो, 1908, पृ. 37–38
3. जे.एच. केर, फाइनल रिपोर्ट ऑन द सर्वे एंड सेटलमेंट ऑपरेशन्स इन द सारन डिस्ट्रिक्ट, 1893–1901, कलकत्ताः बंगाल सचिवालय प्रेस, 1903, पैरा. 516, भाग–2, अध्याय–3, पृ. 156–157
4. एस.एन. हसन, जमींदार्स अंडर द मुगल्स, इन लैंड कन्ट्रोल एंड सोशल स्ट्रक्चर इन इंडियन हिस्ट्री, संपा. आर.ई. फ्राइकेनबर्ग, मैडिसनः यूनिवर्सिटी ऑफ विस्कॉन्सिन प्रेस, 1969, पृ. 24–27
5. थॉमस आर. मेटकाफ, लैंडलार्ड्स एंड द ब्रिटिश राजः नथर्न इंडिया इन द नाइटिंथ सेंचुरी, बर्कले, लॉस एंजिल्स, लंदनः कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय प्रेस, 1979, पृष्ठ. xi–xii.
6. वहीं, देखें पृष्ठ. xi–xii
7. जे.एच. केर, फाइनल रिपोर्ट ऑन द सर्वे एंड सेटलमेंट ऑपरेशन्स इन द सारन डिस्ट्रिक्ट, 1893–1901, कलकत्ताः बंगाल सचिवालय प्रेस, 1903, पैरा. 516, 591–92, 637.
8. आनंद ए. यांग, "द लिमिटेड राजः एग्रेरियन रिलेशंस इन कॉलोनियल इंडिया, सारण डिस्ट्रिक्ट, 1793–1920", ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1989, पृ. 71–75, 90–91.
9. पीटर बर्क, "ह्वाट इज कल्चरल हिस्ट्री?" कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 2008–2004,, पृ. 24–25.
10. एस.एच. फ्रेमेंटल, संयुक्त प्रांत और बंगाल में श्रम की आपूर्ति पर रिपोर्ट, (लखनऊ, 1906), पृ. 43–44. और यह भी देखें, आनंद ए. यांग, "पीजेंट्स ऑन द मूवः अ स्टडी ऑफ इंटरनल माइग्रेशन इन इंडिया", द जर्नल ऑफ इन्टरडिसीपलनरी हिस्ट्री सोशल साइंस,खंड 10, नं. 1, (ग्रीष्मकालीन, 1979), पृ. 47–48.

11. एल. एस. एस. ओ'मेले, बंगाल डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, सारण. कलकत्ताः द बंगाल सेक्रेटेरिएट बुक डिपो, 1908, पृ. 4.
12. आनंद ए. यांग, "पीजेंट्स ऑन द मूवः ए स्टडी ऑफ इंटरनल माइग्रेशन इन इंडिया", द जर्नल ऑफ इन्टरडिसीपलनरी हिस्ट्री, वोल्यूम. 10, नं. 1, (ग्रीष्मकालीन, 1979), पृ. 4.
13. वहीं, पृ. 46–47.
14. लुइस ड्यूमॉन्ट, होमी हायरार्किचसः एन एस्से ऑन द कास्ट सिस्टम, अनुवाद– सैन्सबरी, शिकागोः शिकागो विश्वविद्यालय प्रेस, 1970 (1966), पृ. 153.
15. वहीं, पृ. 21–22.
16. जान ब्रीमेन, "फुटलूज लेबर," कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 1996, पृ. 05. (ब्रीमेन के अनुसार, फुटलूज लेबर के लिए कृषि वाणिज्यकरण ही मुख्य रूप से जिम्मेदार रहा है, क्योंकि इसके वजह से कृषि क्षेत्र से जुड़े श्रमिकों को प्रवासन करने पर मजबूर होना पड़ा और इसमें बेइंतहा वृद्धि भी हुई. ऐसे श्रमिकों को जान ब्रीमेन (Jan Breman) " फुटलूज लेबर" (Footloose Labour) नाम देते हैं।. ऐसे श्रमिक अक्सर भूमिहीन लोग होते हैं तथा इनके पास मजदूरी या अन्य सुविधाओं को पाने का अधिकार नहीं होता हैं. इसप्रकार, फुटलूज लेबर वह व्यक्ति है जो प्रतिदिन के पारिश्रमिक पर काम करता हैं, और जिस दिन वह काम नहीं करेगा, उस दिन उसे भूखे सोना पड़ता हैं. ऐसे श्रमिकों को अर्थशास्त्र की भाषा में कैजुअल लेबर (casual labour) भी कहा जाता हैं.)
17. गवर्नमेंट ऑफ बंगाल, जिला रिपोर्ट, सारण, संभागीय और जिला वार्षिक प्रशासन रिपोर्ट, वर्ष– 1872–1873, 1874, पृ. 397–98.
18. अबुल फजल "अल्लामी", "आईन– ए–अकबरी," भाग–2, अंग्रेजी अनुवाद– कर्नल एच. एस. जारैट (H.S. Jarrett), द्वितीय संस्करण – जदुनाथ सरकार, कलकत्ताः रॉयल एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल,1 पार्क स्ट्रीट, 1949, पृ. 167.
19. वही, पृ. 166–16.
20. जे.एच. केर, "सारण जिले में सर्वेक्षण और निपटान संचालन पर अंतिम रिपोर्ट", 1893–1901, कलकत्ता, बंगाल सचिवालय प्रेस, 1903, अध्याय –3, भाग –2, पैरा. 492–95, 496, पृ. 138.
21. वहीं, पृ. 498.
22. जे. एच. केर "सारण जिले में सर्वेक्षण और निपटान संचालन पर अंतिम रिपोर्ट", 1893–1901, कलकत्ता 1893–1901, कलकत्ताः बंगाल सचिवालय प्रेस, 1903, पैरा. 504, चैप्टर– 03, भाग– 02, पृ. 141
23. जे.एच. केर "सारण जिले में सर्वेक्षण और निपटान संचालन पर अंतिम रिपोर्ट", 1893–1901, कलकत्ता 1893–1901, कलकत्ताः बंगाल सचिवालय प्रेस, 1903, पैरा. 505–506.
24. वहीं, पैरा. 511, पृ. 143.
25. माइक डेविस, "लेट विक्टोरियन होलोकॉस्ट्सः अल नीनो फेमिन्स एंड द मेकिंग ऑफ द थर्ड वर्ल्ड, वर्सोः लंदन, न्यूयॉर्क, 2001, पृ. 23–25, 311–15. ("उन्नीसवीं शताब्दी के जिस कालखंड को साम्राज्यवादी लेखक व अन्य इतिहासकार 'साम्राज्यवादी गौरव का स्वर्णकाल' बताते है, वहीं माइक डेविस अपनी पुस्तक में इसे एशिया व अफ्रीका के लोगों के लिए मानवीय त्रासदी का "अंधकार युग" के रूप में देखते हैं।)
26. ओ' मेले, बंगाल डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, सारण, कलकत्ताः द बंगाल सेक्रेटेरिएट बुक डिपो. 1908, पृ. 83–92
27. जे. एच. केर, फाइनल रिपोर्ट ऑन द सर्वे एंड सेटलमेंट ऑपरेशन्स इन द सारन डिस्ट्रिक्ट, 1893–1901, कलकत्ताः बंगाल सचिवालय प्रेस, 1903, पैरा. 552.